*ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA*
ISSN No.: 2347-2944, RNI TITLED No: UPBIL04292,
RNI REG.No.:UPBIL/2014/66218, SOCI.REG. No. 561/2013-14
Vol.-5, No.-I, PP-65-67, YEAR JUNE 2016

# भारतीय संस्कृति एवं परम्परा के सिद्ध कवि जायसी

❑ डॉ0 अमृता पाठक

भारतीय संस्कृति एवं चिन्तन त्रिगुणात्मक है। वह समरसता और सहिश्णुता के आधार पर ही विकसित हुयी है एवं इन्हीं की कोख से भारतीय परम्परा ने जन्म लिया है। जायसी कहने को तो मुसलमान थे किन्तु भारतीय परम्परा और संस्कृति में गहरी पैठ ने उन्हें धर्म निरपेक्ष बना दिया। सही मायने में वे जाति–पाँति के बन्धन से परे मानवता द्वारा सिद्ध, पूर्ण पुरूश थे। उन्होंने न तो किसी धर्म का निशेध किया है और न उसका अन्धानुकरण ही किया है। इसी 'सर्वधर्म समभाव' की भावना से प्रेरित होकर पदमावत के प्रारम्भ में मुस्लिम परम्परा का अनुसरण किया है; यथा– 'मुहम्मद साहब की स्तुति, ई वर–वन्दना, भााहेवक्त में भोर ाह की स्तुति एवं गुरू की स्तुति।

मलिक मुहम्मद जायसी सूफी प्रेमाख्यानक परम्परा के श्रेश्ठ कवि है। इन्होंने लौकिक प्रेम के माध्यम से अलौकिक प्रेम का वर्णन लोक भाशा अवधी में किया है। हिन्दू संस्कृति एवं परम्परा का सहजग्राह्य वि ाद् वर्ण करके कवि ने जहाँ अपने प्रेमकाव्य को महाकाव्य का सम्मान दिलवाया है, वहीं उनके साधारण व्यक्तित्व में भी अपार विद्वता एवं मृदुभाशिता ने हिन्दी साहित्य द्वारा स्वयं को महाकवि का गरिमामय पद देने के लिए बाध्य कर दिया है। 'प्रेम की पीर' के गायक कवि का जन्म सन् 1494 ई0 के आस–पास हुआ था। 'आखिरी–कलाम' में कवि ने कहा है; यथा– भा अवतार मोर नौ सदी। तीस बरिस ऊपर कवि बदी।' कवि का गोलोकवास सन् 1558 में हुआ माना जाता है। जायस नगर में रहने के कारण 'जायसी' इनका उपनाम है, जबकि मुहम्मद इनका नाम है।

माता–पिता के असमय निधन ने उन्हें स्कूली ि ाक्षा से वंचित कर दिया, तथापि मानवीय भावों से ओत–प्रोत जायसी ने साधु फकीरों की संगति से ज्ञानार्जन किया। वे कबीर के समान उपदे ाक एवं समाज–सुधारक नहीं थे परन्तु लोकाचार एवं लोकधर्म में निपुण थे। इनका व्यक्तित्व जितना ही साधारण था लोक–व्यवहार उतना ही उत्कृश्ट। यही कारण है कि जिसकी भी संगति में आए उन सबका कुछ न कुछ प्रभाव उनके ज्ञान पर अव य पड़ा। ज्ञान और भक्ति ने कवि के मन को बहुत निर्मल कर दिया था, तभी तो अपनी कुरूपता पर हँसने वालों को बिना किसी क्रोध या ईर्श्या के 'मोहि का हँससि की कोहरहि' कहकर लज्जित कर दिया। इतना ही नहीं अपनी सरलता एवं सहजता के व ाीभूत होकर स्वयं ही अपनी कुरूपता का परिचय देते हुए पदमावत में कहा है; यथा– मुहमद कवि जो प्रेम का, ना तन रकत न मांसु। जेइ मुख देखा तेइ हँसा, सुना तो आए आँसु।।

जायसी की अनेक रचनाएं प्रका ा में आयी है; जैसे– पदमावत, अखरावट, आखिरी कलाम,कहरानामा, मसलानामा आदि किन्तु इनकी प्रसिद्धि का कारण महाकाव्य पदमावत है। इसमें चित्तौड़ के राजा रत्नसेन एवं सिंहलद्वीप की राजकुमारी पदमावती के उत्कृश्ट प्रेम का वर्णन हुआ है पदमावत इनकी श्रेश्ठ कृति है। इसी कृति ने कवि को महाकवि का सम्मान दिलाया है। यद्यपि इस महाकाव्य की रचना अवधी भाशा में की गयी है किन्तु तुलसीदास की भांति जायसी भी हिन्दी के श्रेश्ठ कवि के रूप में समादृत हैं और पदमावत हिन्दी साहित्य के एक जगमगाते हुए हीरे के समान अपनी उज्ज्वल छटा

❑ सहायक अध्यापिका, श्री इण्टर कॉलेज, ग्रेटर नोयडा (उ0प्र0) भारत

सभी दि ाओं में बिखेर रहा है। इसमें मानव–जीवन के चिरन्तन सत्य प्रेम तत्व की उत्कृश्ट कल्पना है। इतिहास और कल्पना के मणिकांचन योग द्वारा कवि ने अपनी प्रत्युत्पन्न मति का परिचय भी दे दिया है।

पदमावत की रचना सन् 1540 ई0 या 947 हिजरी में हुयी है। पदमावती की लोकप्रचलित कथा को महाकवि ने कल्पना से अलंकृत करके ऐतिहासिक पात्र अलाउद्दीन के आक्रमण रूपी ताने बाने से बॉध दिया है। निःसंदेह इतिहास और कल्पना के इस अद्भुत योग ने पाठकों को आनन्दातिरेक से भर दिया है। इस काव्य में पदमावती एवं रत्नसेन के विवाह और गौना के माध्यम से हिन्दू संस्कृति रूपायित हुयी है। नायक का साधक रूप एवं नायिका को ई वर रूप में रेखांकित करके कवि ने सूफी परम्परा का भी निर्वाह किया है। रत्नसेन की कठिनाइयों के माध्यम से प्रेम–मार्ग और साधना–पथ दोनों की कठिनाइयों का मर्मस्प ी चित्रण किया है। ई वर द्वारा साधक की सहायता से यह भाव प्रबल हो उठा है कि दृढ़ता के साथ आगे बढ़ने वाले व्यक्ति को विघ्न–बाधाओं का कोई भय नहीं होता है। भगवान की कृपा भी उस पर ही होती है जो बाधाओं से विचलित नहीं होता है। लक्ष्य तक पहुँचने के लिये दुःख और वियोग की चरमावस्था तक पहुँचना अनिवार्य है; यथा–

'तुम्ह राजा औ सुखिया, करहुँ राज सुख भोग।
एहि रे पंथ सो पहुँचै, सहै जो दुख वियोग।।'

अर्थात् प्रेम की पराकाश्ठा बिना वियोग के सम्भव नहीं है। गुरू की महिमा का वर्णन करते हुए कवि ने 'हीरामन' नामक तोते को गुरू गरिमा प्रदान की है। ज्ञानी गुरू के अनुरूप ही तोता 'राहों का अन्वेशी' है। एक ओर जहाँ वह नायक–नायिका का मिलन कराता है, वहीं दूसरी ओर रत्नसेन रूपी साधक को कठिन साधना के द्वारा ई वर की ओर उन्मुख करता है; यथा–

'चतुरवेद हौं पंडित हीरामनि मोहि नाउं।
पदुमावति सों मेरवौं सेव करौं तेहिं ठाउं।।'

आद्योपरान्त भारतीय संस्कृति की गरिमामय झाँकी पदमावत में दिखती है। महाकाव्य में कवि ने अपनी बहुज्ञता का अच्छा परिचय दिया है। ज्योतिश, दि ा ूल, ग्रह–विचार, दिवस–विचार आदि के भुभा ुभ परिणामों का मनोहारी वर्णन किया है; यथा– 'मंगर चलत मेलु मुख धना। मिथुन तुला औ कुँभ पछाहाँ। परिवा छट्ठि कादसि नंदा, दुइज सत्तमी द्वादसि मंदा।'

सास ननद के बीच बहू की स्थिति का मर्मस्प ी वर्णन करते हुए जायसी ने लोक व्यवहार का मनोहारी चित्रण किया है; यथा– 'सासु ननद बोलिन्ह जिउ लेही। दारून ससुर न निसरै देही।

इसी प्रकार अनेक प्रकार के पक्षी, पुश्पों आदि के नाम, विविध प्रकार के व्यंजन, श्रृंगार–आभूशणों के नाम एवं अनेक प्रकार की स्त्रियों का वर्णन भी अति ायता से किया है; यथा– 'पियरि हिलोरि आव जस हँसा, बिरहा पैठि किये कत नंसा। का बरनौ अभरन उर हारा संघ सुगंध धरे जल बाढ़े। फरे आंब अति लहान सुहाए। पुनि सिंगार हाट धनि देसा।' कवि ने अपने महाकाव्य की रचना का उद्दे य य ा प्राप्ति माना है; यथा–

केइँ न जगत जस बेचा, केइँ न लीन्ह जस मोल।
जो यह पढ़ै कहानी, हम संवरै दुइ बोल।।

अतः भारतीय संस्कृति और परम्परा का वर्णन मसनवी भौली में करके अपने मानवीय दृश्टिकोंण का दिग्द र्न ही कराया है। पदमावत नायिका प्रधान महाकाव्य है एवं इसकी कथा पदमावती के जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त चलती है। अन्त में अद्वैतवादी प्रभाव के अनुरूप संसार की निस्सारता अलाउद्दीन के द्वारा प्रस्फुटित होती है; यथा–

'छार उठाइ लीन्ह एक मूँठी, दीन्हि उड़ाई पिरिथिमी झूठी।'

निःसंदेह मानवीय भावनाओं के कवि जायसी ने महाकाव्य पदमावत के द्वारा हिन्दू–मुस्लिम ऐक्य का

दृढ़निश्ठा, भाईचारा, प्रेम एवं करूणा का संदे ा दिया है। इस प्रकार जायसी के काव्य में भारतीय परम्परा और संस्कृति का सफल एवं उत्कृश्ट चित्रण हुआ है। आज भी भारतीय संस्कृति अपनी श्रेश्ठता एवं सहिश्णुता के लिये विख्यात है। यह भारतीय मनीशियों एवं जायसी जैसे कवियों के सदप्रयासों का ही परिणाम है किन्तु कुछ लोगों ने व्यक्तिगत स्वार्थ के व ाभूत होकर हमारी विरासत 'सहिश्णुता' एवं 'समरसता' को हानि पहुँचाने का निंदनीय प्रयास किया है। स्वार्थ सिद्धि के लिए ऐसा नहीं होना चाहिए।

*****